आधुनिक हिन्दी आलोचना : एक अध्ययन

[आगरा विश्वविद्यालय द्वारा पी एच० डी० के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध]

डॉ० मक्खनलाल शर्मा
एम० ए० (हिन्दी, अंग्रेजी)
पी एच० डी०

प्रकाशक
साहित्य प्रकाशन, दिल्ली
प्रगतिशील प्रकाशन, दिल्ली

मूल्य बीस रुपये।

प्रकाशक साहित्य प्रकाशन
१४५८ मालीवाडा दिल्ली।
प्रगतिशील प्रकाशन
कटरा खुशहालराय दिल्ली

मुद्रक शोभा प्रिण्टर्स माडलबस्ती नई दिल्ली।

परम श्रद्धेय गुरुवर !

(प० जगन्नाथ तिवारी, प्रोफेसर तथा अध्यक्ष हिन्दी-सस्कृत विभाग जम्मू एव काश्मीर विश्वविद्यालय जिनके निर्देशन मे यह शोध-प्रबन्ध लिखा गया।)

आपके

समर्पण योग्य तो यह बन नही पाया

फिर भी आपकी स्नेह शीलता का

बल मुझे प्रेरित करता है।

क्षमा प्रार्थना सहित—

—मक्खनलाल शर्मा

भूमिका

हिन्दी साहित्य में आज तक समीक्षा ही सर्वाधिक मात्रा में लिखी गयी है अत आज उसके मूल्यांकन तथा उस पर पडे हुए प्रभावो आदि का वैज्ञानिक विवेचन आवश्यक हो गया है। इस शोध प्रबन्ध में समीक्षा में विकसित होने वाले प्रगतिशील तत्त्वो का क्रमिक विकास तथा प्रगतिशील दृष्टि से हिन्दी समीक्षको एव उनकी समीक्षाओ को देखने का प्रयास किया गया है। हिन्दी समीक्षा में आज प्रगतिशीलता के दर्शन हो रहे हैं वह कोई बाह्य प्रभाव मात्र नही है और न उसका मूल्यांकन किसी युग या युगीन परिवेश म व्याप्त कारण विशेष उद्घाटन द्वारा किया जा सकता है। आज तक की प्रगतिवादी समीक्षा पर यह आरोप लगाया गया है कि उसम या तो सिद्धान्तो को यान्त्रिक पद्धति से लागू किया गया है अथवा भारतीय सास्कृतिक परम्परा तथा परिवेश का ध्यान रखे बिना ही मूल्यांकन कर दिया गया है। इसमें सत्यांश है। अत वस्तुपरक दृष्टिकोण को इन आग्रहो से मुक्त करके समग्र हिन्दी समीक्षा को उसके वहितर रूपो में चलने वाली प्रवृत्तियो समस्त परिवर्तनात्मक परिस्थितियो तथा भारतीय साहित्य एव सास्कृतिक परम्परा के आधार पर देखा और परखा गया है। इस विवेचन मे कुछ समीक्षा-युगो के पुनर्मूल्यांकन का प्रश्न सामने आया है जसे द्विवेदी युग का तथा समीक्षा इतिहास म व्याप्त अनेक प्रश्नो पर नया प्रकाश पडा है। इस प्रबन्ध में मूल्यांकन की कसौटी पर विचार हो सका है और मैं अतिविनम्रता से इस मान्यता को हिन्दी के सुधी विद्वानो के समक्ष प्रस्तुत करना चाहता हूँ कि आज भारतीय साहित्य तथा समीक्षा के अपने सीमित घेरे टूट चुके हैं और नित्य प्रति ऐसी स्थिति आती जा रही है जिससे हम यह अधिकाधिक मात्रा म अनुभव करते जा रहे हैं कि एक विश्व सस्कृति तथा सार्वदेशिक समीक्षा कसौटी की अनिवार्य आवश्यकता है। यह कसौटी न केवल वर्तमानकालीन साहित्य और कला की मीमासा तथा मूल्यांकन करने म समर्थ हो वरन् भूत और भविष्य के प्रति भी अपने मतव्य को पूर्ण दृढता एव सफलता के साथ निभा सके। मुझे लगता है कि कोई प्रचलित वादी-मान्यता इस आवश्यकता की पूर्ति करने में समर्थ नही है इसलिए इसकी आवश्यकता और भी अधिक बढ जाती है तथा यह भी प्रतीत होता है कि ऐसी सर्वमान्य कसौटी उन सभी तत्त्वों को स्वीकार करके चलेगी

जो पाश्चात्य हैं चाहे वे भारतीय हों या अन्य देशी और इसका आधार रहेगी भारतीय काव्यशास्त्र की वह यशस्वी परम्परा जो अपनी सीमाओं में रहते हुए भी आज सब मान्यता प्राप्त कर सकती है।

प्रस्तुत ग्रंथ पी-एच० डी० के शोध प्रबन्ध (आधुनिक हिन्दी आलोचना पर मार्क्सवाद का प्रभाव) का यत्र-तत्र परिवर्तित रूप है। लेखन और प्रकाशन के बीच करीब चार वर्ष का अन्तराल पड़ गया अतः परिवर्तन और संशोधन का औचित्य स्पष्ट है।

बी ४८ राजौरी गार्डन
नई दिल्ली २७

मक्खनलाल शर्मा

विषय-सूची

अध्याय १

अध्याय २

अध्याय ३

अध्याय ४

अध्याय ५

अध्याय ६

अध्याय 1

द्वन्द्ववाद

विरोधो की प्रवृत्ति मे परिवतन शक्ति निहित है यह तथ्य प्राचीन यूनानी तथा भारतीय मनीषियो को ज्ञात था। इसका सबसे प्रबल प्रमाण स्वय द्वन्द्व शब्द ही है। द्वन्द्ववाद के अग्रजी रूप डायलेक्टिक्स (Dialectics) का विकास ग्रीक के डायलेगो (Dialego) शब्द से माना गया है। इस शब्द के पीछे वार्तालाप (Discourse) एव वादविवाद (D bate) का अर्थ निहित था [1]। उस समय इस प्रक्रिया द्वारा प्रत्येक वक्ता अपने विरोधी के कथन की असगतियाँ दिखाकर सत्य का उदघाटन करता था। ये विचारक यह पूर्ण विश्वास रखते थे कि विचारिक क्षेत्र मे अन्तर्विरोधो के प्रगट होने से सत्य का प्रत्यक्षीकरण सम्भव है [2]। ग्रीक दार्शनिक हैराक्लीटस की मान्यता है कि प्रत्येक घटना का कारण द्वन्द्व है अत द्वन्द्व को वे सभी पदार्थों का पिता या स्रोत ठहराते हैं [3]। इस युग म द्वन्द्व के सम्बन्ध म अनेक एसे तथ्यो पर प्रकाश डाला गया था जो आज आकर पूर्ण रूप से सिद्ध हो सके हैं। इस मान्यतानुसार अन्तर्विरोध को कठोर तथा स्थिर नही माना गया है वरन् उस सापेक्ष ठहराया गया है। वे एक दूसरे से एक विशेष अर्थ में ही भिन्न होते हैं। कुछ स्थितियाँ ऐसी होती है जिनमे वे एक दूसरे के रूप म परिवर्तित हो जाते हैं। मध्य-युग मे द्वन्द्ववादी विचारधारा के लिए परिस्थितिया अनुकूल नही थी अत उसका अधिक विकास न हो सका। पूँजीवाद के अभ्युदय तथा सामन्तवाद के समापन काल मे इस द्वन्द्ववाद ने पुन सिर उठाया। पन्द्रहवी शताब्दी के विचारको मे एन० कुजा स्की तथा सोलहवी शताब्दी मे जी० ब्रूनो आदि इसी श्रेणी के विचारक हुए हैं जिन्होने विरोधो के समन्वय की बात कही है। सत्रहवी तथा अठारहवीं शताब्दिया म द्वन्द्ववाद की ओर विद्वानो का ध्यान इसलिए न जा सका कि इस युग में यान्त्रिक प्राकृतिक विज्ञान ने सबको अपनी ओर आकृष्ट किया। सभी अच्छे अच्छे मस्तिष्क उस ओर लग गये, जिससे द्वन्द्ववाद का विकास रुक गया। अठारहवीं शताब्दी के अन्त म तथा उन्नीसवी

1 J Stalin Dialectical and Historical Materialism Page 5
2 M Cornforth Dialectical Materialism Vol I Page 71
3 Fundam ntals of Marxism –Leninism Page 92

शताब्दी के प्रारम्भ में पुनः एक बार विचारक इस ओर आकृष्ट हुए। इस काल में विशेष रूप से जर्मन दार्शनिकों का एक दल इस क्षेत्र में सक्रिय दृष्टिगोचर होता है। यह विचारधारा इतनी व्यापक सिद्ध हुई कि हेगेल ने तो इसे अपनी मान्यताओं का आधारभूत सिद्धान्त ही घोषित कर दिया तथा इस सिद्धान्त के अनुसार अपने अध्यात्मवाद की सिद्धि की। अध्यात्मवादी हेगेल ने यह माना कि विकास की पद्धति द्वन्द्व पर आधारित है। द्वन्द्व विरोधों से होता है। यह विरोध हेगल की शब्दावली में अन्तर्विरोध (Contradiction) कहा गया है। इस अन्तर्विरोध में विरोधी तत्व एक पदार्थ में एक ही साथ प्रस्तुत रहते हैं। दार्शनिक क्षेत्र के अन्तर्विरोधों के आधार पर हेगेल ने ब्रह्म की सत्ता सिद्ध की।

हेगल के इस द्वन्द्ववाद के सिद्धान्त को लेकर मार्क्स ने अपने भौतिकवाद की स्थापना की। मार्क्स ने द्वन्द्ववाद शब्द को तो ले लिया किन्तु हेगल के साथ अपना भेद स्पष्ट करने के लिए उसने अपनी मान्यता को द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद (Dialectical Materialism) की संज्ञा दी। द्वन्द्ववाद विकास की प्रक्रिया है जिसके क्षेत्र में प्रत्येक पदार्थ तीन पृथक स्थिति में आती है। प्रत्येक पदार्थ तत्व तथा स्थिति में विनाश और सृजन की क्रिया साथ साथ होती है[1]। सृजन की इस प्रक्रिया को अग्रसर करने वाले तत्व कहीं बाहर से नहीं आते वरन उसी पदार्थ तथा तत्व में अन्तर्निहित रहते हैं। इन्हें तीन स्थितियों में विभाजित करके वाद (Thesis) प्रतिवाद (Anti Thesis) तथा समन्वय (Synthesis) कहा गया है। प्रत्येक पदार्थ में उसके भीतर एक संघर्ष चलता है। इस संघर्ष में जो तत्व उस वस्तु के स्वरूप के पोषक होते हैं वाद कहलाते हैं और जो उस वाद में से ही उनका विरोध करने लगते हैं प्रतिवाद कहलाते हैं। इस संघर्ष में जो तत्व ह्रासशील सिद्ध होते हैं उनका नाश हो जाता है तथा इसके विपरीत जो विकासशील सिद्ध होते हैं वे उस वस्तु को नया स्वरूप प्रदान करने में समर्थ सिद्ध होते हैं। इस प्रकार द्वन्द्व के द्वारा प्रत्येक वस्तु तत्व तथा परिस्थिति का विकास प्रत्येक समय होता रहता है। यही विकास का शाश्वत क्रम है जो चलता रहता है चल रहा है तथा भविष्य में भी चलता रहेगा। इस सिद्धान्त का विवेचन करते हुए मार्क्स ने अपने को हेगल का विरोधी कहा है। आज सभी मार्क्सवादी मानते हैं कि हेगेल जो सिर के बल खड़ा था उसे मार्क्स ने सीधा करके पैरों के बल खड़ा कर दिया है। इस कथन के पीछे भी यही तथ्य छिपा है कि जिस द्वन्द्ववाद

---

1 Development in it most general sen ■ signifies that at any given movement a thing retains its identity and at the same time causes to retain it Its definiteness remain but at the same time it changes and becomes different (*Ibid* page 94)

■ A F Engels Anti Duhring page 476

B Fundamentals of Marxism Leninism page 91 95

के द्वारा हेगेल ने अध्यात्मवाद एवं ब्रह्म की पुष्टि की थी उसी के द्वारा मार्क्स ने उसका खण्डन करके भौतिकवाद की स्थापना की है।[1]

ऐंगिल्स ने द्वन्द्व का विवेचन करते हुए लिखा है कि इस सिद्धान्त की परीक्षा प्रकृति निरीक्षण द्वारा की जा सकती हैं। आज विज्ञान की अधुनातन शोधों द्वारा जो निष्कर्ष निकल रहे हैं तथा भविष्य मे जो निकलेंगे उनके द्वारा इस सिद्धांत की पुष्टि होता है तथा होती रहेगी। एंगिल्स ने यह भी माना है कि प्रकृति का विकास द्वन्द्वात्मक पद्धति से होता है अन्य किसी पद्धति से नहीं[2]। प्रकृति द्वन्द्वात्मक पद्धति से कार्य करती हुई पुनरावर्तित वृत्त मे घूमती रहती हो—ऐसा नहीं है वरन वह सदैव परिवर्तनशील रहती है। यह परिवर्तन उसे ऐतिहासिक विकास के क्रम मे ले जाता है[3]।

ऐतिहासिक विकास के सम्बन्ध मे ऐंगिल्स डारविन के विकासवाद की नई देन को स्वीकार करते हुए अपनी मान्यता के समर्थन मे प्रस्तुत करते हैं। द्वन्द्व को विश्व के विकास का तरीका मानते हुए प्रकृति को उसके सही रूप म समझने की पद्धति भी वे इसी द्वन्द्ववाद को ठहराते हैं। इस प्रणाली की विशेषताओं का अध्ययन करते हुए य कहा जा सकता है कि जीवन मृत्यु तथा प्रतिगामी पुरोगामी पद्धतियो को वैज्ञानिक रूप से इस पद्धति द्वारा ही समझा जा सकता है। विकास क्रम म जो अनेक प्रक्रियाए आती हैं उनका उचित समाधान इसी पद्धति से हो सकता है[4]। अन्य आदर्शवादी पद्धतियाँ इन सारे प्रश्नों का उत्तर ठीक प्रकार से नहीं दे पाती। इस मान्यता की सिद्धि न केवल प्रकृति द्वारा होती है वरन विज्ञानो के नियमो द्वारा भी होती है। ऐंगिल्स ने गणित रसायनशास्त्र वनस्पतिशास्त्र भौतिकशास्त्र समाजशास्त्र तथा अर्थशास्त्र की कसौटिया पर भी द्वन्द्ववाद को कसा है और इस प्रकार सिद्ध किया है कि यह पद्धति प्रत्यक्ष वैज्ञानिक तथा समाज के इतिहास को समझने में सहायक है।

---

1 My dialectical method is not only different from the Hegelian but is its direct opposite (K. Marx Preface to the Second German edition of volume I of Capital)

2 A—Dialectics so called objectives dialectics prevails throughout nature (Dialectics of nature page 280)

B—Nature is the proof of dialectics and it must be said for modern science that it has furnished this proof with very rich materials increasing daily and thus has shown that in the last resort Nature works dialectically and not metaphysically (Karl Marx and F Engels Selected Works Volume II page 121)

3 *Ibid* page 1?1

4 *Ibid* page 121

द्वन्द्ववाद की सिद्धि विज्ञान द्वारा करते हुए एँगिल्स ने माना है कि जिस प्रकार एक वस्तु में दोनों ध्रुवों की सत्ता का दर्शन चुम्बक के द्वारा हो जाता है वैसे ही प्रत्येक पदार्थ, तत्व तथा परिस्थिति में दोनों विरोधी शक्तियाँ निवास करती हैं। चुम्बकीय छड़ को यदि हम दो टुकड़ों में विभाजित कर दें तब भी प्रत्येक टुकड़े में जिस प्रकार दोनों ध्रुवों की स्थिति यथावत् रहती है उसी प्रकार पदार्थ में हम चाहे जितने भीतर प्रवेश करते चले जायें यह द्वन्द्व हमें सर्वत्र दिखाई देगा। यदि हम विद्युत्, रसायन, जीव विज्ञान आदि गहराइयों में प्रवेश करें और उनके परिवर्तन और विकास को देखें तो हमें द्वन्द्ववाद की इस मान्यता पर अधिक स्थिर आधारित होना पड़ता है। वनस्पतियों और मानव जीवन के विकास में यह नियम लागू होता है। वहाँ भी उत्तराधिकार में प्राप्त तथा परिस्थितियों द्वारा गृहीत शक्तियों में अनवरत संघर्ष दिखाई देता है।[1]

द्वन्द्ववाद के सम्बन्ध में मार्क्स और एँगिल्स के मतों की व्याख्या करते हुए लेनिन ने भी एँगिल्स के समान द्वन्द्ववाद की कसौटी प्रकृति को ठहराया है। आज का विज्ञान ऐसी सामग्री जुटाने में समर्थ हुआ है जिसके आधार पर इस सिद्धान्त की अधिकाधिक सिद्धि सम्भव हो सकी है तथा भविष्य में विज्ञान द्वारा इसे और भी अधिक सिद्धि मिलेगी। प्रकृति के द्वारा पुष्ट यह द्वन्द्ववाद कसौटी पर खरा उतर चुका है। वे स्पष्ट लिखते हैं—

> द्वन्द्ववाद की कसौटी प्रकृति है और यह मानना होगा कि आधुनिक प्रकृति विज्ञान ने इस कसौटी के लिए अनन्त सी सामग्री और दिन पर दिन बढ़ने वाली सामग्री दी है। (रेडियम, इलक्ट्रान और तत्वों के परिवर्तन की जानकारी के पहले यह लिखा गया था।) इस प्रकार प्रकृति विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि अन्ततोगत्वा प्रकृति की क्रियाएं द्वन्द्ववादी हैं न कि अतिभूतवादी।[2]

---

1 Polarity begins with magnetism it is exhibited in one and the same body in the case of electricity it distributes itself over two or more bodies which become oppositely charged All chemical processes reduce themselves to processes of chemical attraction and repulsion Finally in organic life the formation of the cell nucleus is likewise to be regarded as a polarization of the living protein material and from the simple cell onwards the theory of evolution demonstrates how each—advance up to the most complicated plant on the one side and upto man on the other is effected by the continual conflict between heredity and adoptation In this connection it becomes evident how little applicable to such forms of evolution are catagories like positive and negative (F Engels Dialectics of Nature p 280)

2 व्ला० इ० लेनिन : मार्क्सवाद के विकास की कुछ विशेषताएं, पृ० ६।

आगे लेनिन ने इसी निबन्ध मे ऐंगिल्स के मत के आधार पर सिद्ध किया है कि जगत में कुछ भी स्थायी शाश्वत तथा चिरन्तन नही है। सभी कुछ इसके विपरीत नाशवान क्षणभंगुर सापेक्षिक तथा विकासमान है। यदि कुछ शाश्वत है तो यह द्वन्द्व का सदैव चलने वाला क्रम ही है जिसमे नीचे से ऊपर की ओर विकास होता रहता है। इस क्रम मे कुछ घटनाए आकस्मिक लग सकती हैं किन्तु इस आकस्मिकता मे भी एक क्रम और प्रगतिशील विकास मिलता है। अपनी इस मान्यता को पुष्ट करते हुए लेनिन ने लिखा है—

इस क्रम में आकस्मिक सी लगने वाली घटनाओ के बावजूद और अस्थायी प्रतिगमन होने पर भी, अन्त मे प्रगतिशील विकास अपने को प्रकट ही करता है। द्वन्द्वात्मक दर्शन के लिए कुछ भी अन्तिम चिरकालसत्य और पवित्र नही है। वह हर चीज मे और हर चीज की क्षणभंगुरता का दर्शन कराता है। उसके सामने आवागमन के अबाध क्रम को छोडकर निम्न से ऊर्ध्व की ओर अविराम उन्नति को छोडकर कुछ भी चिरन्तन नहीं है और द्वन्द्वात्मक दर्शन अपने मे चिन्तनशील मस्तिष्क मे इस क्रम के प्रतिबिम्ब मात्र के सिवा कुछ नही है। इस प्रकार मार्क्स के अनुसार द्वन्द्ववाद बाह्य ससार और मानवीय चिन्तन दोनो की ही गति के साधारण नियमो का विज्ञान है।[1]

मार्क्स द्वन्द्ववाद के सिद्धान्त के कितने व्यापक और गम्भीर परिणाम निकले जिनके द्वारा समाज व्यक्ति इतिहास तथा अन्य मान्यताओ मे कितनी विविधता और नवीनता आ गई इसका सुन्दर विवेचन लेनिन ने किया है।

---

1 व्ला० ई० लेनिन मार्क्सवाद के विकास की कुछ विशेषताए पृ ३९ ४०।

2 By examining the whole complex of opposing tendencies by reducing them to p ec el defin h on

... out exception have their roots in the condition of the material forces of production Marxism pointed the way to an all embrac ng nd comp h ... process of rise ... rmation People ... the motives of ... e to the clash ... l of all these ... are the objec ... orm the basis ... developm nt ... and pointed ... form and law ... ntradictriness.

(Lenin Marx Engels Marxism page 28)

लेनिन ने द्वन्द्ववाद पर लिखते समय निबन्ध में द्वन्द्व की परिभाषा एकता का विभाजन तथा उसके परस्पर विरोधी अंगों की स्वीकृति को माना है।[1] इसके लिए विज्ञान की विभिन्न मान्यताएँ समर्थन में प्रस्तुत की गई हैं।

1 गणितशास्त्र में— + और — भिन्नक तथा अनुराग।
2 यान्त्रिकी में— क्रिया तथा प्रतिक्रिया।
3 भौतिकशास्त्र में— धनात्मक विद्युत तथा ऋणात्मक विद्युत।
4 रसायनशास्त्र में— परमाणुओं का संघटन तथा विघटन।
5 समाजशास्त्र में— वर्गसंघर्ष।

द्वन्द्व (अन्तर्विरोधों) की स्थिति को स्वीकार करते हुए[3] लेनिन ने इसे विकास और क्रिया के समान शाश्वत माना है।[4] लेनिन के इस परम्परानुमोदित मत को स्टालिन ने भी स्वीकार किया तथा अपनी मान्यताएँ द्वन्द्वात्मक तथा ऐतिहासिक भौतिकवाद (Dialectical and Historical Materialism) शीर्षक निबन्ध में लिखीं कि यह पद्धति एवं दृष्टिकोण है जिसे मार्क्स लेनिनवादी संघ ने स्वीकार कर लिया है। इसे द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद इसलिए कहा जाता है क्योंकि इसकी पद्धति प्राकृतिक तत्वों तथा उनकी प्रक्रियाओं का अध्ययन करने की द्वन्द्व पर आधारित है। यह भौतिकवादी इसलिए माना जाता है क्योंकि इस पद्धति का दृष्टिकोण तथा व्याख्या भौतिकवादी मान्यताओं पर आधारित है।[5] मार्क्सवादी द्वन्द्ववाद की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए स्टालिन ने लिखा है —

(1) द्वन्द्ववाद के अनुसार प्रकृति आकस्मिक रूप से घटित रूप में नहीं पाई गई है, और न उसके तत्व आपस में असम्बद्ध और निरपेक्ष हैं वरन वे आपस में एक दूसरे से सम्बन्धित अन्योन्याश्रित निरन्तर विकसित होने वाले तथा सापेक्षिक हैं। इस प्रकार द्वन्द्ववाद का यह सिद्धान्त भली प्रकार समझा देता है कि यदि प्रकृति के किसी एक तत्व को अलग से लेकर उसका विश्लेषण करना चाहें तो ऐसा करना सम्भव नहीं होगा। किसी भी तत्व को समझना उसके परिवेश में ही सम्भव है। यदि कोई तत्व प्रकृति की परिवेशात्मक स्थिति से अलग करके देखा जाय तो उसका कोई

---

1 *Ibid* page 33›
2 *Ibid* page 33›
3 A—*Ibid* page 33› 333
B—V I Lenin Philosophical Note Books page °63
4 The unity (coincidence identity resultant) of opposites is conditional temporary transitory relative The struggle of mutually exclusive opposites is absolute just as development and motion are absolute (V I Lenin Marx Engels Marxism p 333)
5 J Stalin Dialectical and Historical Materialism p 1

मूल्य नहीं होगा अतः परिवेश का मूल्य स्थापित करने वाला यह पहला सिद्धांत है।[1]

(2) द्वन्द्ववाद के अनुसार प्रकृति स्तब्ध नहीं है और न वह निश्चल स्थिर और नित्य है। वरन उसमें निरंतर गति और परिवर्तन होते रहते हैं। जिससे वह नित्य नवीन एवं विकसित होती रहती है। उसमें सदैव कुछ-न-कुछ नया उत्पन्न होकर अभिवृद्ध होता है और कुछ न कुछ सदैव ह्रासोन्मुखी होकर नष्ट होता रहता है। इसलिये द्वन्द्व पद्धति के अनुसार यह आवश्यक हो जाता है कि इसे समझने के लिये केवल उसके भीतरी सम्बन्धों तथा अन्यो याश्रयित्व तक ही हम सीमित न रह जायें वरन उनकी गति विकास परिवर्तन तथा अस्तित्व में आने और अस्तित्वविहीन बनने पर भी दृष्टि रखनी पड़ती है। द्वन्द्ववाद के अनुसार वे तत्व महत्वपूर्ण नहीं हैं जो इस क्षण उपस्थित हैं या जिनका ह्रास होना प्रारम्भ हो चुका है इसकी अपेक्षा उनका अधिक महत्व है जो उदित हो रहे हैं या विकसित हो रहे हैं चाहे इस समय वे स्थायी न प्रतीत हो रहे हो। ये उदित या विकसित होने वाले तत्व ही विजयी होंगे अतः उनका मूल्य सर्वाधिक है।[2]

द्वन्द्ववाद की व्याख्या आज के वर्तमान मार्क्सवादी व्याख्याताओं ने भी की है। मौरिस कोनफोथ ने विरोधों की एकता और संघर्ष को ही द्वन्द्व का आधार माना है। ये विरोध बिना एक दूसरे की सहायता के नहीं समझे जा सकते हैं।[3] वे द्वन्द्व को प्रकृति तथा समाज में सर्वत्र देखते हैं जिससे विकास होता रहता है[4] वस्तुओं के वास्तविक परिवर्तन और विकास के दर्शन की दृष्टि ही द्वन्द्ववाद है। यह पद्धति लोकतन्त्र के उदाहरण के साथ भली प्रकार समझाई गई है। लोकतन्त्र सम्बन्धी मान्यताओं में जिस प्रकार दृष्टिकोण सम्बन्धी विकास धीरे धीरे और द्वन्द्व पद्धति से हुआ है ठीक उसी प्रकार सभी पदार्थों और जगत का विकास भी हो रहा है[5] जो लोग इस द्वन्द्व में अलगाववादी प्रवृत्तियों के दर्शन करते हैं उनके सन्देहों का निराकरण करते कोनफोथ महोदय ने स्पष्ट रूप से बताया है कि वस्तुएं तत्व सम्बन्ध तथा पद्धतियाँ अलग अलग रहने और चलने वाली नहीं हैं वरन सर्वत्र विरोध युग्म — मूल में विरोध ही स्थित होता है। विरोधी तत्व अलग न होकर उसी तत्व का एक अंग होता है जिसे उससे अलग भी नहीं किया जा सकता। अपनी मान्यता के समर्थन में हेगेल आदि के कथनों को प्रस्तुत करके इसकी सतर्क व्याख्या प्रस्तुत की गई है।[6]

---

1 *Ibid* page 6

2 *Ibid* p 7

3 This unity of opposites—the fact that oppo ites cannot be understood in seperation one from another (Maurice Cornforth Dialectical Materialism Vol I p 78)

4 *Ibid* p 78 79

5 *Ibid* p 69

6 *Ibid* p 76

माओत्सेतुंग प्रभृति विचारकों ने भी इस प्रश्न पर अपने विचार प्रकट किए हैं। इन विचारों में कोई मौलिकता तथा सैद्धान्तिक भेद देखने को नहीं मिलता है। किसी न किसी प्रकार मार्क्स एंगेल्स लेनिन की विचारधारा ही प्रस्तुत की जाती रही है। माओ प्रसिद्ध चिंतक हैं माओ। इस सम्बन्ध में माओ विचार सम्पन्न स्पष्टता से व्यक्त किए हैं —

मानवीय ज्ञान का वर्गीकरण ठीक उनकी विषय वस्तुओं में निहित विशिष्ट असंगतियों पर ही आधारित होता है। इस प्रकार एक खास किस्म की असंगति जो किसी खास घटना क्षेत्र की विशेषता होती है विज्ञान की किसी विशेष शाखा की विषय-वस्तु बनती है। उदाहरणार्थ—गणित में धनात्मक तथा ऋणात्मक अंक, यांत्रिकी में क्रिया और प्रतिक्रिया, भौतिकी में धनात्मक विद्युत और ऋणात्मक विद्युत, रसायन में वियोजन और संयोजन, समाजशास्त्र में उत्पादन शक्तियाँ और उत्पादन के सम्बन्ध, वर्ग और वर्गों के बीच संघर्ष, युद्ध विज्ञान में हमला और बचाव, दर्शन में भाववाद और भौतिकवाद, अधिभूतवादी दृष्टिकोण और द्वन्द्ववादी दृष्टिकोण आदि—इन सबका भिन्न भिन्न विज्ञानों के रूप में अध्ययन इसीलिए होता है कि इनमें से प्रत्येक एक विशेष असंगति तथा एक विशेष गुण होता है। इसमें संदेह नहीं कि असंगति की सार्वभौमता को स्वीकार किए बिना हम वस्तुओं की गति के विकास के सार्वभौम कारण या सार्वभौम आधार का किसी तरह पता नहीं चला सकते जो अन्य वस्तुओं के गुणों से भिन्न होता है वस्तुओं की गति के विकास के विशिष्ट कारण या विशिष्ट आधार का पता नहीं चला सकते एक वस्तु से दूसरी वस्तु के अन्तर को नहीं पहचान सकते और न ही वैज्ञानिक अध्ययन के क्षेत्रों को निर्धारित कर सकते हैं।[1]

द्वन्द्व में विपरीत तत्व समरूप हो जाते हैं। कुछ स्थितियाँ ऐसी भी आती हैं जिनमें वे एक दूसरे से बदल जाते हैं और उनका रूप सम हो जाता है। ये विपरीत तत्व सजीव परिस्थितिबद्ध तथा परिवर्तनशील माने जाने चाहिए तथा द्वन्द्ववाद के अनुसार इनका अध्ययन इसी दृष्टिकोण से होना चाहिये। माओत्सेतुंग ने इस सम्बन्ध में अपना अभिमत स्पष्टता के साथ प्रकट किया है। द्वन्द्व के वैशिष्ट्य का स्वरूप स्पष्ट करते हुए उन्होंने लिखा है—

प्रत्येक प्रक्रिया में असंगतिपूर्ण पहलू एक दूसरे से पृथक होते हैं। आपस में संघर्ष करते हैं और एक दूसरे के विरोधी होते हैं। ऐसे असंगतिपूर्ण पहलू बिना अपवाद के विश्व की सभी वस्तुओं की प्रक्रियाओं में तथा मानवीय चिन्तन में निहित होते हैं। किसी साधारण प्रक्रिया में विपरीत तत्वों की केवल एक ही जोड़ी होती है किन्तु किसी संश्लिष्ट प्रक्रिया में एक से अधिक जोड़ियाँ होती हैं। इसके अलावा विपरीत तत्वों की विभिन्न जोड़ियों का आपस में विरोध होता है। इस तरह वस्तुगत

1 माओत्सेतुंग : माओत्सेतुंग—ग्रन्थावली दूसरा भाग पृ १७।

जगत में सभी वस्तुओं और मानवीय विचारों की रचना होती है और उन्हें गति के लिए प्रेरणा मिलती है।'[1]

विकास का अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि उसका कारण वस्तुओं के भीतर निहित होता है यही बाहर उसकी खोज व्यर्थ है। इस विकास के अध्ययन में परिवेश पर दृष्टि रखना अत्यन्त आवश्यक है। प्रत्येक वस्तु अपने परिप्रेक्ष्य से प्रभावित होती है तथा परिप्रेक्ष्य को प्रभावित करती है अतः वस्तुओं के अध्ययन में इसका ध्यान रखना चाहिए।[2]

अमेरिका तथा पश्चिमी देशों में भी द्वन्द्ववाद पर विचार किया गया है। Hans Freistadt ने अपने एक लेख में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद को गम्भीर औचित्यपूर्ण तथा सही वैज्ञानिक दर्शन नहीं माना है। जो विद्वान इसे एक विश्वास मात्र कहकर छोड़ देना चाहते हैं उनके अभिमत का खण्डन किया है उनकी मान्यता है[3]—

to show that contrary to allegations occasionally made dialectical materialism is a serious consistent and in my opinion correct philo ophy of science and not a dogma imposed by politicians which know scholar worthy of the name can even discuss in its own terms

इसका उत्तर देते हुए अलबर्ट ई० ब्लुमबर्ग (Alb rt E Blumberg) ने अपने निबन्ध विज्ञान तथा द्वन्द्ववाद में उनके मत को अप्रामाणिकतावादी माना है।[4] इस प्रकार आज भी द्वन्द्ववाद के सम्बन्ध में अनेक धारणाएं चल रही हैं विद्वान विचार कर रहे हैं तथा सत्य को समझने की यह पद्धति भी कसौटी पर चढ़ी हुई है।

भौतिकवाद

जगत के रहस्यों का उद्घाटन और व्याख्या दार्शनिकों का प्रिय विषय रहा है। इस सम्बन्ध में सभी कालों देशों तथा समुदायों में कुछ न कुछ प्रयत्न हुए हैं। प्राचीन काल से लेकर आज तक इस सम्बन्ध में अनेक मत निर्धारित हुए हैं। इनमें से दो को मुख्य माना जा सकता है। एक है अध्यात्मवादियों का भाववाद तथा दूसरा भौतिकवादियों का भूतवाद। अध्यात्मवादियों ने जगत से परे सत्ता की स्थिति स्वीकार की तथा भौतिकवादियों ने जगत को आधार माना। इतना ही नहीं अनेक भाववादी दार्शनिकों ने परोक्ष सत्ता तथा जगत दोनों को स्वीकार किया। इस प्रकार अनेक सूक्ष्म अन्तरों भेदों प्रभेदों आदि के आधार पर असंख्य भाववादी दार्शनिक पद्धतियाँ

---

1 माओत्सेतुंग माओत्सेतुंग—प्रवादलं—दूसरा भाग पृ ८६।

2 वही पृ० ६।

3 Hans Freistadt Dialectical Materialism : A Friedly Introduction published in the American Magazine namely Philosphy of Science April 1956 Vol 23 p 97

4 Science and Society Vol XXII No 4 Fall 1059

चलती रही है तथा चल रही है। भौतिकवादियों में भी प्रायः दृष्टिकोण समय समय पर विकसित होकर पनपते रहे हैं। जिस प्रकार भाववादी दार्शनिकों में शंकराचार्य का अद्वैतवाद चरम विकास है, उसी प्रकार भौतिकवादियों की चरम परिणति कार्लमार्क्स के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद में आकर हुई है।

भौतिकवाद की स्पष्ट व्याख्या करते हुए कार्लमार्क्स ने उसे अध्यात्मवाद का विरोधी माना है और बताया है कि भाववादी जगत् का आधार ब्रह्म (Idea) को स्वीकार करते हैं जबकि भौतिकवाद किसी इस प्रकार की सत्ता को प्रश्रय न देकर यथार्थ जगत् को ही सत्य मानता है और उसके लिए भाववाद केवल यथार्थ जगत् की मानसिक परिणति है।[1] स्टालिन इसको भौतिकवाद इसलिए कहना चाहते हैं कि प्रकृति तथा उसके तत्वों की व्याख्या उनके प्रति दृष्टिकोण तथा उनका सिद्धान्त भौतिकवादी है।

भौतिकवाद भारत में पूर्व प्रचलित था। यदि मूलवाद के आदिम रूपों का अध्ययन किया जाय तो वह हमें वैदिक और भारतीय दर्शनों में ई० पू० शताब्दियों में मिल जाता है। मानव सभ्यता के सर्वप्रथम प्रामाणिक अवशेष वेदों में प्रकृति के विभिन्न रूपों का वर्णन उनके मूल में शक्ति का आरोप करके किया गया है। आगे चलकर भौतिकवादी दृष्टिकोण योगशास्त्र में पल्लवित हुआ किन्तु वह अध्यात्मवाद से विलग न हो सका। उसमें जितना अंश शरीरशास्त्र से सम्बन्धित है (यही योग का आधार है) भौतिकवादी है शेष आदर्शवादी। इन भौतिकवादी मान्यताओं का वैशेषिक दर्शन में सम्यक् विकास हुआ। इस विचारधारा में जगत् को सत्य माना गया है और उसका आधार ईश्वर न होकर अणु (Atom) है। असंख्य अणुओं के संयोग से जगत् का निर्माण मानकर इस दर्शन ने नये क्षेत्रों का सृजन किया। इन अणुओं में स्वयं संचालन शक्ति नहीं मानी जा सकी। अन्य अध्यात्मवादी दर्शनों की तरह इन अणुओं की संचालिका शक्ति ईश्वर को ही माना गया। मीमांसाकार ने एक कदम और आगे बढ़कर ब्रह्म से भी पीछा छुड़ा लिया—वह निरीश्वरवादी है किन्तु कर्मकाण्ड और वेदों की अपौरुषेयता के रहते उसके दर्शन को भी भाववादी कहा जाता है।[3] महात्मा गौतम बुद्ध ने अनात्मवादी (अनीश्वरवादी) मान्यताओं को स्वीकार

---

1 To Hegel the process of thinking, which under the name of the idea he even transforms into an independent subject is the demiurgos (Creator) of the real world and the real world is only external phenomenal form of the Idea. With me on the contrary the ideal is nothing else than the material world reflected by the human mind and translated into forms of thought. (K. Marx Preface to the Second German edition of volume I of capital.)

2 J. Stalin Dialectical and Historical Materialism page [illegible]

3 डा० वि० ना० उपाध्याय : आधुनिक हिन्दी कविता, पृ० ३८२।

करके चली आती हुई परम्परा को धर्म का रूप दिया तथा शरीर, जगत, दुःख आदि की व्याख्या करके सबकी दृष्टि भौतिकवाद की ओर उन्मुख की, किन्तु आगे चलकर नागार्जुन आदि दार्शनिकों ने शून्यवाद और विज्ञानवाद की दार्शनिक मान्यताओं की व्याख्या द्वारा उसे भाववादी परिणति दी और यही दशा जैन मत की भी हुई। भूतवादी परम्परा आगे चलकर चार्वाक मत में पूर्णतः पल्लवित हुई। चार्वाक ने ईश्वर, आत्मा तथा परलोक आदि के प्रश्नों को मूलतः अस्वीकार किया और जगत् तथा देहवाद की स्थापना की। यह देहवाद जनता के बीच प्रारम्भ से किसी न किसी रूप में प्रचलित था।[1] जो आगे चलकर तन्त्र में पूर्ण रूप से विकसित हुआ।

जिस प्रकार भारतीय दर्शनों में भौतिकवादी प्रवृत्ति मिलती है ठीक उसी प्रकार यूरोपीय दर्शन में भी भौतिकवादी तत्वों के दर्शन होते हैं। यूरोप के अधिकांश प्राचीन भूतवादी दार्शनिक यह मानते थे कि समस्त पदार्थ रचना अणुओं के द्वारा होती है। डेमोक्रीटस तथा ऐपीक्यूरस आदि ग्रीक दार्शनिकों की मान्यता है कि विश्व की रचना उन छोटे छोटे अणुओं से होती है जो शून्य में इधर उधर घूमते रहते हैं। अणुओं के समूह को वस्तुओं की संज्ञा मिली है।[2]

मार्क्स से पूर्व फायरबाख ने जिस भौतिकवाद की स्वरूप रचना की थी मार्क्स और ऍंगिल्स ने उसी के मूल को लेकर अपने भौतिकवाद की स्थापना की। फायरबाख की मान्यताओं में जो आदर्शवादी धार्मिक नैतिक दृष्टिकोण था उसे मार्क्स और ऍंगिल्स ने न केवल अस्वीकार किया वरन उसके स्थान पर भूतवाद की वैज्ञानिक तथा दार्शनिक मान्यताओं को स्थापित किया।[3]

मार्क्सवादी भौतिकवाद कोई रूढ़िवादी पद्धति न होकर वस्तुओं को सही रूप से समझने का एक तरीका है जो सारे प्रश्नों का उत्तर देता है तथा जिसके मूल में विज्ञान को प्रश्रय मिला हुआ है। इस पद्धति के अनुसार भूत (matter) को केवल छोटे छोटे अणुओं का समूह नहीं माना जा सकता जिससे कि सारे पदार्थों की रचना हुई है वरन यह तो सृष्टि का असीम समूह है जिसमें अनेक इस तथा भिन्न प्रकार की दुनियाएं स्थित हैं। इस प्रकार भूत में अन्तरिक्षीय गैस तथा धूल के बादल अपना सौर मण्डल पृथ्वी तथा उस पर स्थित प्रत्येक वस्तु सम्मिलित है। आज जिन लोकों का ज्ञान तक नहीं है और जिनका पता आगे चलकर लगेगा उनके साथ इस क्षेत्र में प्रकाश तथा भौतिकी की वे क्रियाएं भी सम्मिलित हैं जिनके द्वारा एक शरीर या अणु की क्रिया को दूसरे में स्थानान्तरित कर दिया जाता है। इसमें विद्युत-चुम्बकीय तथा नाभकीय भौतिक क्षेत्र भी आते हैं। जैसा कि सभी भौतिकवादियों ने स्वीकार किया है यदि संक्षेप में कहा जाय तो भौतिकवादी भूत के अन्तर्गत उन सब

1 D P Chattopadhyaya Lokayat Introduction p XVII
2 Fundamentals of Marxism Leninism p 32
3 J Stalin Dialectical and Historical Materialism p 4 5

चलती रही है तथा चल रही है। भौतिकवादियों में भी प्रायः दृष्टिकोण समय समय पर विकसित होकर आगे रहे हैं। जिस प्रकार भाववादी मान्यताओं में शंकराचार्य का अद्वैतवाद चरम विकास है, उसी प्रकार भौतिकवादियों की चरम परिणति मार्क्सवाद के द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद में आकर हुई है।

भौतिकवाद की स्पष्ट व्याख्या करते हुए मार्क्सवाद ने उसे अध्यात्मवाद का विरोधी माना है और बताया है कि भाववादी जगत् का आधार प्रज्ञा (Idea) को स्वीकार करते हैं जबकि भौतिकवाद किसी इस प्रकार की सत्ता को प्रश्रय न देकर यथार्थ जगत् को ही सार मानता है और उसके लिए भाववाद केवल यथार्थ जगत् की मानसिक परिणति है।[1] स्टालिन इसको भौतिकवाद इसलिए कहना चाहते हैं कि प्रकृति तथा उसके तत्वों की व्याख्या उनके प्रति दृष्टिकोण तथा उनका सिद्धान्त भौतिकवादी है।

भौतिकवाद मार्क्स से पूर्व प्रचलित था। यदि भूतवाद के आदिम रूपों का अन्वेषण किया जाय तो वह हमें ग्रीक और भारतीय दर्शन में ई० पू० शताब्दियों में मिल जाता है। मानव सभ्यता के सर्वप्रथम प्रामाणिक ग्रन्थ वेदों में प्रकृति के विभिन्न रूपों का वर्णन उनके मूल में शक्ति का आरोप करके किया गया है। आगे चलकर भौतिकवादी दृष्टिकोण योगशास्त्र में पल्लवित हुआ किन्तु वह अध्यात्मवाद से विलग न हो सका। उसमें जितना अंश शरीरशास्त्र से सम्बन्धित है (यही योग का आधार है) भौतिकवादी है शेष आदर्शवादी। इन भौतिकवादी मान्यताओं का वैशेषिक दर्शन में सम्यक् विकास हुआ। इस विचारधारा में जगत् को सत्य माना गया है और उसका आधार ईश्वर न होकर अणु (Atom) है। असंख्य अणुओं के संयोग से जगत् का निर्माण मानकर इस दर्शन ने नये क्षेत्रों का सृजन किया। इन अणुओं में स्वयं संचालन शक्ति नहीं मानी जा सकी। अन्य अध्यात्मवादी दर्शनों की तरह इन अणुओं की संचालिका शक्ति ईश्वर को ही माना गया। मीमांसाकार ने एक कदम और आगे बढ़कर ब्रह्म से भी पीछा छुड़ा लिया—वह निरीश्वरवादी है किन्तु कर्मकाण्ड और वेदों की अपौरुषेयता के रहते उसके दर्शन को भी भाववादी कहा जाता है।[3] महात्मा गौतम बुद्ध ने अनात्मवादी (अनीश्वरवादी) मान्यताओं को स्वीकार

1 To Hegel the process of thinking which under the name of the idea he even transforms into an independent subject [illegible] the demiurgos (Creator) of the real world and the real world is only external phenomenal form of the Idea With m on the contrary the ideal [illegible] nothing else than the material world reflected by the human mind and translated *into forms of thought* (K Marx Preface to the Second German edition of volume I of capital)

2 J Stalin Dialectical and Historical Materialism page [illegible]

3 डा० वि० ना० उपाध्याय आधुनिक हिन्दी कविता पृ० ३८२।

करके चली आती हुई परम्परा को धर्म का रूप दिया तथा शरीर जगत, दुःख आदि की व्याख्या करके सबकी दृष्टि भौतिकवाद की ओर उन्मुख की, किन्तु आगे चलकर नागार्जुन आदि दार्शनिकों ने शून्यवाद और विज्ञानवाद की दार्शनिक मान्यताओं की व्याख्या द्वारा इसे भाववादी परिणति दी और यही दशा जैन मत की भी हुई। भूतवादी परम्परा आगे चलकर चार्वाक मत में पूर्णतः पल्लवित हुई। चार्वाक ने ईश्वर आत्मा तथा परलोक आदि के प्रश्नों को मूलतः अस्वीकार किया और जगत् तथा देहवाद की स्थापना की। यह देहवाद जनता के बीच प्रारम्भ से किसी न किसी रूप में प्रचलित था।[1] जो आगे चलकर तन्त्र में पूर्ण रूप से विकसित हुआ।

जिस प्रकार भारतीय दर्शनों में भौतिकवादी प्रवृत्ति मिलती है ठीक उसी प्रकार यूरोपीय दर्शन में भी भौतिकवादी तत्त्वों के दर्शन होते हैं। यूरोप के अधिकांश प्राचीन भूतवादी दार्शनिक यह मानते थे कि समस्त पदार्थ रचना अणुओं के द्वारा होती है। डेमोक्रीटस तथा ऐपीक्यूरस आदि प्राक् दार्शनिकों की मान्यता है कि विश्व की रचना उन छोटे छोटे अणुओं से होती है जो शून्य में इधर उधर घूमते रहते हैं। अणुओं के समूह को वस्तुओं की संज्ञा मिली है।[2]

मार्क्स से पूर्व फायरबाख ने जिस भौतिकवाद की स्वरूप रचना की थी मार्क्स और ऐंगिल्स ने उसी के गूदे को लेकर अपने भौतिकवाद की स्थापना की। फायरबाख की मान्यताओं में जो आदर्शवादी धार्मिक नैतिक दृष्टिकोण था उसे मार्क्स और ऐंगिल्स ने न केवल अस्वीकार किया वरन् उसके स्थान पर भूतवाद की वैज्ञानिक तथा दार्शनिक मान्यताओं को स्थापित किया।[3]

मार्क्सवादी भौतिकवाद कोई रूढ़िवादी पद्धति न होकर वस्तुओं को सही रूप से समझने का एक तरीका है जो सारे प्रश्नों का उत्तर देता है तथा जिसके मूल में विज्ञान को प्रश्रय मिला हुआ है। इस पद्धति के अनुसार भूत (matter) को केवल छोटे छोटे अणुओं का समूह नहीं माना जा सकता जिससे कि सारे पदार्थों की रचना हुई है वरन् यह तो सृष्टि का असीम समूह है जिसमें अनेक इस तथा भिन्न प्रकार की दुनियाएं स्थित हैं। इस प्रकार भूत में अन्तरिक्षीय गैस तथा धूल के बादल अपना सौर मण्डल पृथ्वी तथा उस पर स्थित प्रत्येक वस्तु सम्मिलित है। आज जिन लोकों का नाम तक नहीं है और जिनका पता आगे चलकर लगेगा, उनके साथ इस क्षेत्र में प्रकाश तथा भौतिकी की वे क्रियाएं भी सम्मिलित हैं जिनके द्वारा एक शरीर या अणु की क्रिया को दूसरे में स्थानान्तरित कर दिया जाता है। इसमें विद्युत-चुम्बकीय तथा नाक्षत्रीय भौतिक क्षेत्र भी आते हैं। जैसा कि सभी भौतिकवादियों ने स्वीकार किया है यदि संक्षेप में कहा जाय तो भौतिकवादी भूत के अन्तर्गत उन सब

1 D P Chattopadhyaya Lokayat Introduction p XVII
2 Fundamentals of Marxism Leninism p 32
3 J Stalin Dialectical and Historical Materialism p 4 5

गुण को स्वीकार कर गया है क्योंकि हमारे मस्तिष्क के बाहर भी उसने स्वतन्त्र होकर स्थित है।[1] आज के मार्क्स विज्ञान इस भूत को समझने उसका अध्ययन करने तथा उसके विभिन्न रूपों के पीछे निहित नियमों और सिद्धान्तों का अध्ययन करने में लगे हैं। भूत में आकर्षण का गुण है। जो लोग इसके विकर्षण के गुण को भी स्वीकार करते हैं वे आकर्षण को ही ठीक से नहीं समझ पाते हैं। विकर्षण तो आकर्षण का ही दूसरा रूप है। ये दोनों तो अविभाज्य तत्व हैं। जिस प्रकार धनात्मक और ऋणात्मक दोनों एक साथ एक स्थान तथा काल में उपस्थित रहते हैं उसी प्रकार इनकी स्थिति भी मानी गई है। जो भूत में केवल आकर्षण मानते हैं उनका मत एकांगी तथा द्वन्द्वात्मक के विपरीत पड़ता है। आकर्षण और विकर्षण के इस नियम का प्रतिपादन करते हुए एंगिल्स ने दोनों को अविभाज्य माना है।

Attraction is a nec ssary property of matter but not repulsion but attraction and repulsion are as inseparable as positive and negative and hence from dialectics itself it can already be predicted that the true theory of matter based on mere attraction is fals in adequate and one sided

यदि गुरुत्वाकर्षण के नियम का अध्ययन किया जाय तो उससे स्पष्ट रूप से यह ज्ञात हो जाता है कि भूत में आकर्षण और विकर्षण दोनों की स्थिति है। हेगेल ने भी यह स्वीकार किया है कि भूत में आकर्षण उसके निचोड़ की तरह स्थित रहते हैं।[3]

भूत का स्वरूप निर्धारण करते समय उसका सम्बन्ध गति के साथ माना गया है। भूत और गति अविभाज्य कहे गए हैं।[4]

Motion is the mode of existence of matter Never any where has there been matter without motion nor can there be Motion in cosmic space mechani al motion of smaller masses on the various celestial bodies the vibration of molecules as heat or as electrical or magnetic currents chemical disintegrat on and combination organic life—at each given moment each individual autom of matter in the world is in one or other of these form of motion or in everal forms at once Matter without motion is just as inconceivable as *motion without matter* Motion is therefore as *uncreatable* and ı destructible as matter itself

---

1 A—Fundamentals of Marxism Leninism P 32
B—J Stalin Dialectical and Historical Materialism P 18 19
2 F Engels Dialectics of Nature page 3?3
3 *Ibid* p 3?3
4 F Engels Anti Dhuring p 88

जगत् का सृजन गतिशील भूत से हुआ है न कि किसी ब्रह्म द्वारा—ऐसी मान्यता सभी भौतिकवादी विद्वानों की है। एंगिल्स ने इस सम्बन्ध में विस्तार से विचार किया है।[1] उनकी मान्यतानुसार प्रकृति में जहाँ कहीं हमें गति दिखाई देती है वह सब भूत में निहित गति ही है। अनेक उदाहरणों द्वारा इस तथ्य को आसानी से समझा जा सकता है। जगत् में गतिशीलता सर्वत्र तथा सभी कालों में रहती है। गतिशीलता के कारण ही यह सक्रिय तथा संचालित है। यदि हम गति की पद्धति का अध्ययन करते हैं तो हमें यह स्पष्ट रूप से पता चल जाता है कि वह नीचे से ऊपर की ओर धावित होती है। इसकी गति जहाँ निम्न से ऊर्ध्व की ओर है वहीं वह सामान्य से असामान्य और विरल से संकुल की ओर भी है।[2]

Motion in the most general sense, conceived as the mode of existence the inherent attribute of matter comprehends all changes and proce ses occurring in the universe from m re change of place right up to thinking

इसी का परिणाम है कि यदि हम विकास का इतिहास देखते हैं तो हम पहले सारे प्रश्नों और समस्याओं के सीधे-सादे और साधारण उत्तर मिलते हैं। इस जगत् से सम्बन्धित अनेक प्रश्नों का उत्तर ब्रह्म माया जीवात्मा आदि की सीधी सादी कल्पनाओं द्वारा दे दिया गया। जैसे जैसे इन विचारों में अधिकाधिक विकास हुआ, वे सादा से अधिक कठिन तथा संकुल निराकरणों की ओर बढ़े। विज्ञान के विकास में भी हम इसी नियम की सार्वभौम सत्ता दृष्टिगोचर होती है।

गति का एक रूप दूसरे में परिवर्तित किया जा सकता है तथा उसे अन्य में से निकाला जा सकता है। उच्च तथा संकुल गति निम्न और सादा गति के बिना स्थिर नहीं रह सकती। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उच्च और संकुल को निम्न और सादा गति के रूप में घटाया जा सकता है। उच्च और निम्न तथा संकुल और सादा गतियों का एक दूसरे से अलग करना सम्भव नहीं है वे एक दूसरे के साथ जुड़ी हुई हैं।[3] गति भूत के ऊपर कहीं बाहर से या किसी बाह्य शक्ति के प्रभाव से लदी हुई नहीं है वरन् वह तो भूत की प्रकृति में है। भूत के भीतर धड़कन की तरह उसका निवास है जो सारे विकासों का मूल कारण है। यह गति किसी अन्य शक्ति द्वारा संचालित न होकर स्वचालित है। यह गति एकरूपता से सीमित न होकर अनन्त विभिन्न रूपों में गतिशील है। यह गति भी एकसी नहीं रहती—यह भी विकसित होती रहती है। इसी का परिणाम है कि विश्व में अनेक प्रक्रियाएं होती रहती हैं। अभी एक वस्तु हम निर्मित होती दिखाई देती है वह बदल जाती है (उसका यह बदलाव भी उसी

1 *Ibid* page 83

2 F Engels Dialectics of Nature p 0?

3 M Cornforth Dialectical Materialism Vo I—page 52

समय से प्रारंभ हो चुका है जब कि उसका निर्माण प्रारम्भ होता है) या अन्य रूप धारण कर लेती है। इन परिवर्तित रूपों म असम्बद्धता नहीं होती। वे एक दूसरे से सम्बन्धित भीतर भीतर जुडे हुए रहते हैं। यदि हम उन रूपों म से किसी एक रूप को समझना और समझाना चाहें तो केवल एक रूप के आधार पर ही यह करना असम्भव है।[1] इसके लिए हम अनिवार्य रूप से उसके आगे पीछे देखना पड़ेगा उसके विकास की दिशा समझनी होगी। परिवेश का ध्यान रखना होगा। उसकी प्रगतिशील और प्रतिगामी शक्तियों पर दृष्टि डालनी होगी। तभी उसे समझना सम्भव है। इस सारी सृष्टि और जगत् को समझने का प्रयत्न जिस मस्तिष्क के द्वारा किया गया है तथा किया जाता है वह मस्तिष्क क्या इस भूत से भिन्न और परे है? इस सम्बन्ध म मार्क्स ने स्पष्ट रूप से लिखा है कि हमारा मस्तिष्क भी शरीर का एक अंग है। बिना भौतिक तत्त्व के विचार करना असम्भव है। मन विचार भी भूत का फल है।[2] विचार और भूत को अलग नहीं किया जा सकता। सारे परिवर्तन पदार्थ में ही तो होते हैं।[3] यह भूत अनादि और अनन्त है। न इसे निर्मित किया जा सकता है और न नष्ट करना ही सम्भव है।[4]

भूत और चेतना के प्रश्न को उठाते हुए मार्क्स ने लिखा है कि मनुष्य की चेतना उसकी सत्ता को निर्धारित नहीं करती उसके विपरीत उसकी सामाजिक सत्ता ही उसकी चेतना को निश्चित करती है।[5] इस कथन की पुष्टि करते हुए लेनिन ने चेतना को अस्तित्व की सच्ची प्रतिमूर्ति कहा है।[6] उसकी मान्यता से यह प्रतीत होता है कि यह जीवन के एक रूप की स्थिति इस चेतना से आरम्भ है। उस रूप म जब परिवर्तनकारी तत्त्व अधिक हो जाते हैं और वह (वस्तु) अपना रूप बदलने लगती है तभी उसकी चेतना लुप्त हो जाती है। इस भूत और चेतना में से किसे प्रथम और किसे द्वितीय स्थान मिलना चाहिए – यह प्रश्न यद्यपि चेतना के विकास से ही स्पष्ट हो जाता है फिर भी इस पर बारबार प्रकाश डाला गया है जिससे अध्यात्मवादी किसी भी प्रकार भौतिकवाद को अपने प्रभाव म न ला पावें। भूत प्रकृति अस्तित्व (सत्ता) शरीर आदि प्रथम स्थान के अधिकारी हैं तथा आत्मा चेतना अनुभूति आदि द्वितीय स्थान पर आती हैं। चेतना और शक्ति (energy) म अन्तर है। चेतना जहाँ सम्पूर्ण सत्ता की प्रतिच्छाया है वहाँ शक्ति (energy) केवल उसका एक रूप है। शक्ति के द्वारा गति का पूर्ण रूप प्रकट नहीं होता उसका अंश मात्र ही स्पष्ट

1 *Ibid* pag 55
2 K Marx selected works Vo I—p 33?
3 *Ibid* pag 302
4 Engels Anti Dubring p 93
5 K Marx selected works Vol I P ?69
6 V I Lenin Selected works Vol XIII—page ?66 67

करने म वह् समथ होती ह ।[1] इसम केवल क्रिया होती है प्रतिक्रिया नही होती ।

आज की वनानिक शोधें तथा अणु आदि के सम्बध म अधुनातन मायताए मार्क्स और ऐंगिल्स की भौतिकवादी स्थापनाओ को पुष्ट करती है । आज नवीन भौतिकी शोधो द्वारा यह सिद्ध किया जा चुका ह कि अणु भी मिश्रित निर्माण ह जो निरन्तर गतिशील दशा में रहता ह । यहाँ तक कि एक पदाथ के अणु दूसर पदाथ के अणुओ के रूप म परिर्वातित किए जा सकते हैं ।[3]

भूत की गति का अध्ययन समय और स्थान की सीमा म किया जा सकता ह । सभी पदाथ तथा शरीर जो विश्व म स्थित हैं—शून्य म एक निश्चित स्थान पर स्थित हैं । वे एक दूसरे से एक निश्चित दूरी तथा सीमा मे है । घूमने वाले पदाथ और शरीर का एक निश्चित भाग ह ।[4] भूत का स्थान के साथ वही सम्बन्ध ह जो गति के साथ ह तथा गति का भूत के साथ ह । भूत और स्थान अविभाज्य हैं । सामान्य वस्तु शरीर तथा विश्व में मुख्य अन्तर यह ह कि प्रथम का प्रारभ और अन्त ह द्वितीय अनन्त और अनादि ह । भूत और स्थान के समान ही स्थान और समय भी एक दूसरे से सम्बन्धित ह ।[5] आइन्स्टीन जसे महान वज्ञानिक ने अपने सापेक्षता वाद द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि स्थान (Space) भूत स सयुक्त ह । इसस काल की निरपेक्षतावादी मान्यताए खडित हो गई हैं । समय और स्थान से बाहर कुछ भी स्थित नही ह । समय और स्थान सापेक्ष ह ।[6] ऐंगिल्स ने वनानिक मान्यताओ के सिद्ध होने से पूव ही इसे कह दिया था ।[7] भौतिकवाद विज्ञान और अभ्यास को आधार बना कर आगे चलता ह । उसकी मान्यता ह कि इस प्रकार धीरे धीरे प्रकृति और विश्व के सारे रहस्यो से हम परिचित हो सकते हैं । इस दुनिया म ऐसा कुछ भी नहीं ह जिसे जाना न जा सकता हो । यह ठीक ह कि आज जो कुछ हमे ज्ञात ह उसकी अपेक्षा अज्ञात बहुत अधिक ह । इस विषय म व आशावादी हैं ।[8]

द्वन्द्वात्मक विकास तथा अन्तर्विरोध

मार्क्स तथा ऐंगिल्स ने विकास का आधार द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद को माना है । विकास के सम्बन्ध में मूलत जो सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए हैं । उनके अनुसार प्रकृति तथा समाज में विकास उछाल (leap) के द्वारा होता है । य उछाल क्रम

---

1 F Engels Dialectics of Nature page 107
2 *Ibid* Preface to Dialectics of Nature page 12
3 Fundamentals of Marxism Leninism page 33
4 *Ibid* p 37
5 *Ibid* page 38
6 *Ibid* p 38
7 F Engels Dialectics of Nature page 3[illegible]
8 J Stalin Dialectical Materialism page 20 21

को बनाए नहीं रखते वरन् उसे तोड़ देते हैं। इससे विकास हो जाता है। इस उत्पन्न का उत्तरदायित्व उस वस्तु में निहित आन्तरिक विरोधों पर है।[1]

जैसा कि पीछे दिखाया जा चुका है प्रत्येक पदार्थ में विरोधी तत्व निहित रहते हैं। इन तत्वों का अस्तित्व वस्तु के अस्तित्व के साथ ही जुड़ा हुआ है। इन तत्वों के बीच चलने वाला संघर्ष भी सदा ही से चलता रहता है जैसा कि प्रत्येक पदार्थ में इन तत्वों की स्थिति। जब संघर्ष उस दशा को पहुँच जाता है जहाँ उसमें गुणात्मक परिवर्तन हो जाना चाहिए तब यकायक परिवर्तन होता है स्थिति बदल जाती है क्रम टूट जाता है नया रूप उत्पन्न हो जाता है इसी को विकास कहते हैं—जो एक स्थिति से दूसरी स्थिति में ला देता है

इस मान्यता को सबसे पहले प्रस्तुत करने वाले हेगल हैं। उन्होंने बच्चे के पैदा होने की घटना को आधार बनाकर विकास का विश्लेषण किया है। वह मानते हैं कि भ्रूण गर्भ में यथेष्ट काल तक चुपचाप पड़ा रह कर अभिवृद्धि पाता रहता है जिससे उसमें परिमाणात्मक परिवर्तन होता रहता है। जब यह परिमाणात्मक परिवर्तन उस सीमा पर पहुँच जाता है जबकि गुणात्मक परिवर्तन हो सके तभी यकायक उछाल के द्वारा उसकी क्रमिक विकास-धारा बदल जाती है—नयी स्थिति (श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया) उत्पन्न हो जाती है—बच्चा जन्म ले लेता है। उसमें गुणात्मक अन्तर आ जाता है।[3]

It is as in the case of the birth of a child after a long period of nutrition in silence the continuity of the gradual growth in size of quantitative change is suddenly cut short by the first breath drawn—there is a break in the process a qualitative change and the child is born

हेगेल की इस मान्यता को मार्क्स ने प्रकृति तथा समाज आदि के विकास पर लागू किया और इसको प्रामाणिक बनाने के लिए विज्ञान की सहायता ली गई। मार्क्स एंगिल्स आदि ने बताया—विश्व स्थिर तथा अपरिवर्तनशील नहीं है।[4] अन्तर्विरोधों द्वारा जैसा कि द्वन्द्ववाद से सिद्ध है—उसमें सदैव परिवर्तन और विकास होता रहता है।[5] इस विकास की दिशा क्रमशः अग्रसर नहीं होती वरन् उसमें क्रमिक विकास की गति भी बीच में आने वाली उछालों की प्रक्रिया से बाधित होती है और इसी से विकास होता है।[6]

---

1 M Cornforth Dialectical Materialism Vol I—p 58

2 *Ibid* page 60

3 Hegel Phenomenology of Mind Preface

4 K Marx and F Engels Selected works Vol XIV—p 549

5 Lenin Selected works p 30

6 *Ibid* Vol VI—p 17

मार्क्स तथा ऐंगिल्स ने इस सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से हेगेल मत को समझकर विज्ञान तथा समाज का अध्ययन प्रस्तुत किया है तथा उन्होंने बताया है कि शुद्ध परिमाणात्मक अभिवृद्धि या अवृद्धि (कमी) गुणात्मक उछाल के रूप में बदल जाती है। पानी का उदाहरण देकर उन्होंने सिद्ध किया है कि पानी को अगर गर्म किया जाय तो एक सीमा तक तो वह लगातार अधिकाधिक मात्रा में गर्म होता जायगा और एक निश्चित सीमा पर पहुँच कर उसका अधिक गर्म होना बन्द हो जायगा—एक उछाल लेकर वह भाप के रूप में परिवर्तित हो जायगा। यही परिमाण का गुण में परिवर्तन होना कहा गया है।[1]

This is precisely the Hegelian nodal line of measure relations, in which at certain definite nodal points the purely quantitative increase or decrease gives rise to a qualitative leap, for example where boiling point and freezing points are the nodes at which—under normal pressure—the leap to a new aggregate state takes place and where consequently quantity is transformed into quality

यह विकास की प्रक्रिया प्रकृति द्वारा सिद्ध की गई है। माना गया है कि प्रकृति में विकासवाद का जो सिद्धान्त डारविन ने स्थिर किया है वह ठीक है।[2] मार्क्स का द्वन्द्वात्मक विकास इसके अनुकूल है। विकास का प्रकृति के अतिरिक्त विज्ञान के सिद्धान्तों द्वारा भी सिद्ध किया गया है जिससे वह वैज्ञानिक माना गया है। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में विकास परिमाण से गुणात्मक विकास में माना गया है। इस सम्बन्ध में एक उदाहरण पानी का भाप में बदल जाना ऊपर दिया जा चुका है।

भौतिकी[3] तथा रसायनशास्त्र[4] के द्वारा मार्क्स तथा ऐंगिल्स ने इस सिद्धान्त का विस्तार से प्रतिपादन किया है तथा बताया है कि विकास अन्तर्विरोधों के कारण होता है। मार्क्स से पूर्व अनेक दार्शनिक विकास का कारण ब्रह्म (Idea) को मानते थे। मार्क्स तथा ऐंगिल्स ने सभी आदर्शवादी मान्यताओं का खंडन किया। इन्होंने विकास के कारणों को वस्तु में ही निहित माना है वे कहीं बाहर से नहीं आते।[5] इस सम्बन्ध में भाववादियों की मान्यता है कि संघर्ष केवल वैचारिक हो सकता है जब कि मार्क्स ने इसे वस्तुगत और वैचारिक दोनों प्रकार का माना है।[6] अन्तर्विरोध परिवर्तन की संचालन शक्ति है। इस अन्तर्विरोध के कारण आन्तरिक दशा इस प्रकार की हो जाती है कि परिवर्तन अपरिहार्य हो उठता है, उसे रोका

1 K Marx and F Engels Selected works Vol XIV—p 45 46
2 *Ibid* p 23
3 K Marx and F Engels Selected works Vol XIV—p 527 28
4 *Ibid* p 5?8
5 M Cornforth Dialectical Materialism Vol I—p 102
6 *Ibid* p 104

जाना सम्भव नहीं होगा। संघर्ष (अन्तर्विरोध) विहीन प्रक्रिया में पुनरावृत्ति होती चली जायगी विकास नहीं होगा विकास तो तभी सम्भव है जबकि उस वस्तु की भीतरी शक्तियों को उसका कारण माना जाय।[1] ये अन्तर्विरोध सार्वभौमिक नियम के अन्तर्गत कार्य करते हैं किन्तु प्रत्येक प्रक्रिया विशेष में ये अन्तर्विरोध विशिष्ट भी होते हैं। अर्थात अन्तर्विरोध सार्वभौमिक होते हुए भी विशिष्ट होते हैं। इस सम्बन्ध में माओत्सेतुंग ने स्पष्ट रूप से लिखा :—

ये यह नहीं समझ पाते कि असंगति की सार्वभौमता ठीक असंगति की विशिष्टता में ही निहित है। जब हम वस्तुओं में निहित असंगति के नियम का विश्लेषण करें तो हमें पहले असंगति की सार्वभौमता का विश्लेषण करना चाहिये फिर विशेष के साथ असंगति की विशिष्टता का विश्लेषण करना चाहिए। अन्त में असंगति का विश्लेषण करना चाहिए और फिर असंगति की सार्वभौमता पर फिर लौट आना चाहिए।

अन्तर्विरोध सार्वभौमिक होने के साथ ही साथ निरपेक्ष भी होते हैं जिनका अस्तित्व प्रत्येक प्रक्रिया में आरम्भ से लेकर अन्त तक विद्यमान रहता है।[3] जब कोई नई रचना तथा उसके संघटक विपरीत तत्त्व पुरातीन प्रक्रिया का स्थान ग्रहण करते हैं तो इस नवीन प्रक्रिया में भी अन्तर्विरोध उसी के साथ उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार उस वस्तु का इतिहास अन्तर्विरोधों का इतिहास कहा जा सकता है।[4] प्रत्येक पदार्थ की प्रत्येक गति में अन्तर्विरोध होता है और यह अन्तर्विरोध अपनी विशिष्टता रखता है। पदार्थ की गति के विशिष्ट तत्त्वों को ध्यान में रख कर ही हम वस्तुओं में भेद कर सकते हैं। प्रत्येक वस्तु का जो अपना विशिष्ट गुण होता है उसका कारण उसके अन्तर्विरोध की विशिष्टता है। इसी कारण एक वस्तु दूसरी से भिन्न दिखाई देती है। यह नियम प्रकृति तथा समाज सभी पर लागू होता है।[5] विकास परिवर्तन मात्र नहीं है। परिवर्तन (Change) तथा विकास (Development) में भेद है। इसी प्रकार बढ़ोतरी (Growth) और विकास भी एक नहीं है। बढ़ोतरी में वस्तु बढ़ती जाती है यह परिवर्तन परिमाणात्मक होता है जबकि विकास गुणात्मक परिवर्तन में माना जाता है। इसके लिए यह उदाहरण दिया जा सकता है कि भ्रूण जब तक बढ़ता रहता है उसमें परिमाणात्मक परिवर्तन होता है उसे बढ़ोतरी कहेंगे किन्तु जैसे ही उसमें श्वास प्रश्वास प्रक्रिया का प्रारम्भ हो जाता है विकास कहा

1 *Ibid* p 106
2 माओत्सेतुंग माओ ग्रन्थावली दूसरा भाग पृ १२।
3 *Ibid* p 15
4 *Ibid* p 15
5 *Ibid* p 16 17

जाता है—यह गुणात्मक परिवर्तन का परिणाम है[1]

अन्तर्विरोधों का जब अध्ययन किया जाता है तो उनके अंतर सम्बन्धों तथा उनकी सम्प्रता म देखने भर से काम नहीं चलता। इसके लिए यह भी आवश्यक होता है कि अन्तर्विरोधों को प्रत्येक पहलू से देखा जाय तथा उस विकासशील पदार्थ या समाज के प्रत्येक स्तर पर देखा जाय—तभी उसकी असलियत का पता लग सकता है। अन्तर्विरोधों के यह सब अध्ययन आत्मगत पद्धति से न होकर वस्तुगत पद्धति से होने चाहिए। अध्ययन की इस पद्धति को ठोस विश्लेषण-पद्धति कहा गया है। इस सम्बन्ध म माओत्सेतुग ने स्पष्ट लिखा है—

ठोस विश्लेषण किए बिना किसी भी असगति के विशिष्ट स्वरूप के बारे में कोई जानकारी हासिल नहीं की जा सकती। हमे लेनिन के इन शब्दों को हमेशा याद रखना चाहिए ठोस परिस्थितियों का ठोस विश्लेषण।[2]

इस मान्यतानुसार यह सिद्ध है कि सत्य ठोस होता है। सत्य पहले से निश्चित योजनानुसार नहीं जाना जा सकता है और सत्य की कोई विशिष्ट पद्धति भी नहीं है वह तो वस्तुओं के सही परिस्थितियों गतियों तथा सम्बन्धों म अध्ययन करने पर प्रकट होता है। इस सम्बन्ध म लेनिन ने अपना स्पष्ट अभिमत देकर सदेह के लिए कोई स्थान नहीं रहने दिया है।[3]

Genuine dialectics by means of a thorough detailed analysis of a process in all its concreteness The fundamental thesis of dialectics is there is no such thing as abstract truth truth is always concrete

सत्य को आदर्शवादी शाश्वत एव निरपेक्ष मानते हैं। वे उसका सम्बन्ध ब्रह्म से स्थापित करते हैं। इसके विपरीत मार्क्सवाद म सत्य को परिवर्तनशील तथा सापेक्ष माना गया है। यह आंशिक सत्य ही हो सकता है पूर्ण नहीं। इसका सम्भावित रूप ही सम्भव है सही सही (exact) रूप नहीं बताया जा सकता और विज्ञान द्वारा भी निरपेक्ष सत्य का समर्थन नहीं होता है। सत्य के सम्बन्ध मे फ्रेडरिक एँगिल्स का मत यह है कि सत्य अपरिवर्तनशील नहीं होता। जब जब मानव शाश्वत सत्य की सीमा तक पहुचा है और उसने इसकी घोषणा की है, तब तब यह इसलिए सम्भव हो सका है कि उसके यथार्थ और शक्ति की सीमा आ गई है वह उस सीमा से आगे जाने मे असमर्थ हो गया है। इसका प्रमाण यह है कि जिन बातों को एक समय में शाश्वत मान लिया गया था—आगे चलकर उनके आगे भी सचाई बढ़ी और कभी तो पिछला शाश्वत

1 M Cornforth Dialectical Materialism Vol I—p 93
2 *Ibid* p 20
3 Lenin one step forward Two steps back section R, something about dialectics Quoted from Dialectical Materialism By M. Cornforth Vol I p 88

सत्य बिल्कुल असत्य सिद्ध हुआ ।[1]

विकास के द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि शाश्वत सत्य की बात कहना अनुपयुक्त है ।[2] जो शाश्वत सत्य की बात करता है वह किसी सामयिक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता है ।[3] द्वन्द्वीय अन्तर्विरोध के समान विचारों का विकास तथा सत्य का विकास सचाई और गलती के द्वन्द्व से होता है । इसमें सत्य मिथ्या और मिथ्या सत्य सिद्ध हो सकते हैं ।[4]

As soon as we apply the antithesis between truth and error outside of that narrow field which have been referred to above it becomes relative and therefore unserviceable for exact scientific modes of expression and if we attempt to apply it as absolutely valid outside that field we really find ourselves altogether beaten both poles of antithesis become transformed into their opposites truth become error and error truth

स्टालिन का मत है कि विश्व म सब कुछ परिवर्तित होता रहता है और उसके साथ सत्य भी इसी नियम से संचालित है । अत सत्य स्थिर नही है— परिवर्तनशील है

वस्तुगत सत्य से यह अर्थ लिया जाता है कि वह ऐसा मानवीय ज्ञान है जिसके द्वारा वस्तुगत संसार प्रतिबिम्बित होता है । यह इन्द्रियानुभव या प्रत्यक्षदर्शन पर आधारित है । मानव का इन्द्रियानुभव उसके विचारो के समान वस्तुओं का प्रतिबिम्ब या मानसचित्र होता है । इन्द्रियबोध वस्तुवादी विश्व का व्यक्तिवादी प्रतिबिम्ब है ।[6] सत्य की कसौटी व्यवहार है । जो सत्य व्यवहार की कसौटी पर खरा उतरता है— यथार्थ पर आधारित है उसी का स्वीकार किया जा सकता है ।[7]

विकास के सम्बन्ध म निषेधात्मकनिषेध (Negation of the Negation) के सिद्धान्त पर भी मार्क्स एंगिल्स आदि ने विस्तार से प्रकाश डाला है । इस सम्बन्ध में बताया गया है कि सामान्य निषेध ध्वंसात्मक होता है किन्तु जब निषेध (ध्वंस) का निषेध किया जाता है तब वह सृजन की परिस्थिति उत्पन्न करता है। इस दुहरे निषेध द्वारा उन परिस्थितियो का सृजन संभव होता है जिनका पहले विनाश हो चुका है । उसी के द्वारा विकास हो सकता है । निषेधात्मक निषेध विकास का एक मुख्य तथा सुन्दर नियम माना गया है। यह नियम प्रकृति, चिंतन तथा इतिहास आदि क्षेत्रो म समान रूप से लागू होता है । एँगिल्स ने लिखा है कि निषेध का अर्थ सामान्य प्रकार नही है । विकास की प्रक्रिया में जब पुरातन नवीन को स्थान देकर

1 F Engels Anti Duhring p 1°3
2 *Ibid* p 127
3 *Ibid* p 126
4 F Engels Anti Duhring p 1°8
5 J Stalin Anarchism and Socialism Chapter I
6 Lenin Selected works Vol XIV—p 106
7 Fundamentals of Marxism Leninism p 133

छूट जाता है, तो नवीन जब तक पुराचीन का निषेध नहीं करेगा तब तक उसकी स्थापना नहीं हो सकती है। इस प्रकार निषेध स्वीकारात्मक विकास है। दूसरी ओर पुराचीन जिसका निषेध हो गया है वह भी प्रगति के स्तर का निर्माण करता है और इस प्रकार विकास की प्रक्रिया पूर्ण होती है। उदाहरणस्वरूप कह सकते हैं—

पूँजीवादी व्यवस्था का स्थान समाजवादी व्यवस्था लेती है। समाजवाद पूँजीवाद का निषेध करता है किन्तु वे परिस्थितियाँ जिन्होंने समाजवाद को विकसित किया है पूँजीवाद की देन हैं। इस प्रकार समाजवाद का विकास पूँजीवाद से होता है—समाजवाद पूँजीवाद का अगला चरण है। उत्पादन की सारी उपलब्धियाँ तथा प्रगति, सांस्कृतिक उपलब्धि आदि जो पूँजीवादी व्यवस्था की देन थी वे सब भी जीवित रहती हैं जबकि पूँजीवादी समाज व्यवस्था का अन्त हो जाता है। इसके विपरीत उनका संरक्षण किया जाता है तथा उन्हें और अधिक विकसित किया जाता है।[1] इस सम्बन्ध में मार्क्स की मान्यताएँ अत्यन्त स्पष्ट हैं।[2]

The capitalist mode of appropriation the result of the capitalist mode of production produces capitalist private property This is the first negation of individual private property as founded on the labour of the proprietor But capitalist production begets, with the inexorability of a law of nature its own negation It is the negation of negation

वे निषेधात्मक निषेध का अर्थ प्राचीन की पुनरावृत्ति न लेकर वस्तु का उच्चस्तर पर विकास स्वीकार करते हैं। इस नियम के द्वारा मार्क्सवादियों ने प्रकृति और समाज का विकास दिखाया है।[3] कोई विकास जो पदार्थ या विचार आदि किसी क्षेत्र की भूतपूर्व दशा को परिवर्तित नहीं कर देता है विकास ही नहीं माना जा सकता है।[4]

यांत्रिक भौतिकवाद बनाम द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद

जैसा कि पीछे स्पष्ट हो चुका है, अणुवाद की स्वीकृति ग्रीक दार्शनिकों तथा भारतीय दार्शनिकों ने हजारों वर्ष पूर्व की थी। मध्ययुगीन धार्मिक मान्यताओं के विरुद्ध 16 17 वीं शताब्दी में उसका पुनरुद्धार हुआ। इसके विकास का कारण यूरोप की औद्योगिक क्रांति मानी जाती है। यांत्रिक भौतिकवाद को इसीलिए पूँजीवादी दर्शन की संज्ञा दी गई है। इसके अनुसार इस जगत की उत्पत्ति अणुओं से मानी गई है। ये अणु स्वतन्त्र, मुक्त एक दूसरे से अलग तथा विशिष्ट सत्ता युक्त हैं।

---

1 M Cornforth Dialectical Materialism Vol I—p 128
2 K Marx Capital Vol —page 763
3 F Engels Anti Duhring page 897
4 According to the statement of K Marx quoted in Fundamentals of Marxism Lenin page 101

सत्य बिल्कुल असत्य सिद्ध हुआ।[1]

विज्ञान के द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि शाश्वत सत्य की बात कहना अनुपयुक्त है।[2] जो शाश्वत सत्य की बात कहता है वह किसी लाभकारी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकता है।[3] ध्रुवीय अंतर्विरोध के समान विचारों का विकास तथा सत्य का विकास सचाई और गलती के द्वन्द्व से होता है। इसमें सत्य मिथ्या और मिथ्या सत्य सिद्ध हो सकते हैं।[4]

As soon as we apply the antithesis between truth and error outside of that narrow field which have been referred to above it becomes relative and therefore unserviceable for exact scientific modes of expression and if we attempt to apply it as ab olutely valid out side that field we really find our elves altogether beaten both poles of antithesis become transformed into their opposites truth become error and error truth

स्टालिन का मत है कि विश्व में सब कुछ परिवर्तित होता रहता है और उसके साथ सत्य भी इसी नियम से सचालित है। अत सत्य स्थिर नहीं है—परिवर्तनशील है[5]

वस्तुगत सत्य से यह अर्थ लिया जाता है कि वह ऐसा मानवीय ज्ञान है जिसके द्वारा वस्तुगत ससार प्रतिबिम्बित होता है। यह इन्द्रियानुभव या प्रत्यक्षदर्शन पर आधारित है। मानव का इन्द्रियानुभव उसके विचारों के समान वस्तुओं का प्रतिबिम्ब या मानसचित्र होता है। इन्द्रियबोध वस्तुवादी विश्व का व्यक्तिवादी प्रतिबिम्ब है।[6] सत्य की कसौटी व्यवहार है। जो सत्य व्यवहार की कसौटी पर खरा उतरता है—यथार्थ पर आधारित है उसी का स्वीकार किया जा सकता है।[7]

विकास के सम्बन्ध में निषेधात्मकनिषेध (Negation of the Negation) के सिद्धान्त पर भी मार्क्स ऐंगिल आदि ने विस्तार से प्रकाश डाला है। इस सम्बन्ध मे बताया गया है कि सामान्य निषेध ध्वसात्मक होता है किन्तु जब निषेध (ध्वस) का निषेध किया जाता है तब वह सृजन की परिस्थिति उत्पन्न करता है। इस दुहरे निषेध द्वारा उन परिस्थितियों का सृजन सभव होता है जिनका पहले विनाश हो चुका है। उसी के द्वारा विकास हो सकता है। निषेधात्मक निषेध विकास का एक मुख्य तथा सुन्दर नियम माना गया है। यह नियम प्रकृति, चिंतन तथा इतिहास आदि शास्त्रों में समान रूप से लागू होता है। ऐंगिल्स ने लिखा है कि निषेध का अर्थ सामान्य प्रकार नहीं है। विकास की प्रक्रिया में जब पुरातन नवीन को स्थान देकर

1 F Engels Anti Duhring p 123
2 *Ibid* p 127
3 *Ibid* p 126
4 F Engels Anti Duhring p 1°8
5 J Stalin Anarchism and Socialism Chapter I
6 Lenin Selected works Vol XIV—p 106
7 Fundamentals of Marxism Leninism p 133